International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 02-03-2021, Accepted: 03-04-2021, Published: 02-05-2021
Volume 3, Issue 2, 2021, Page No. 21-27

'एक भारतीय आत्मा' के काव्य में रहस्यमूलक व प्रेममूलक राष्ट्रीय चेतना

डॉ. मिनी जोर्ज
असोसियेट प्रोफसर, विभागाध्यक्षा और शोध निर्देशक, हिन्दी स्नातकोत्तर एवं शोध विभाग कैथोलिक्केट कॉलेज, पत्तनमतिट्टा, केरल, भारत

सारांश

श्री माखनलाल चतुर्वेदी की राष्ट्रीय काव्य साधना का मुलाधार भारत की परम्परागत दिव्य राष्ट्रीयता है। माखनलाल चतुर्वेदी की भक्ति जिसप्रकार राष्ट्रोन्मुख है, उसी प्रकार उनका प्रेम भी रहस्योन्मुख एवं राष्ट्रोन्मुख है। उन्होंने ही रहस्योन्मुख राष्ट्रीय काव्य की अभिनव धारा का सूत्रपात किया था। उनकी कविताओं में पहले प्रेम और बलिदान का द्वन्द्व है, फिर उसमें प्रेम और बलिदान का आलिंगन है, बाद में स्वातंत्र्य संग्राम के अमर व सक्रिय सेनानी माखनलाल जी श्रृंगार को उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं और पूर्ण रूप से प्रलय ने ही उनकी प्रणय ह्वनि को छीन लिया।

मूलशब्द: मूलाधार, राष्ट्रोन्मुख, रहस्योन्मुख, सूत्रपात, बलिदान

प्रस्तावना

हिन्दी कविता में राष्ट्रीय चेतना का जयघोष करनेवाले कवियों में श्री माखनलाल चतुर्वेदी चिरस्मरणीय हस्ताक्षर हैं। हिन्दी साहित्य क्षेत्र में वे 'एक भारतीय आत्मा' के उपनाम से विख्यात हैं। उन्होंने युग की माँग की पूर्ति केलिए अपने साहित्य देवता से जन मानस को जाग्रत किया। उन्होंने पराधीन भारत में अपनी आँखों से राष्ट्र की जिस तपन, विवशता और अकुलाहट को देखा है, अनुभव किया है, उसी को काव्य में अभिव्यक्त किया। बहुमुखी प्रतिभा संपन्न माखनलाल चतुर्वेदी के प्रमुख काव्य संग्रह हैं - 'हिमकिरीटनी' 'हिमतरंगिनी' 'माता', 'युगचरण', 'समर्पण', 'मरणज्वार', 'वेणु लो गूँजे धरा', 'बीजुरी काजल आज रही' आदि।

श्री माखनलाल चतुर्वेदी की राष्ट्रीय काव्य साधना का मुलाधार भारत की परम्परागत दिव्य राष्ट्रीयता है। "वये राष्ट्रीय जागृयामः पुराहिता"[1] अर्थात हम जागरूक रहकर राष्ट्र के आदर्श नागरिक बनें तथा "माता भूमि पुत्रोड्ड पृथिव्या"[2] अर्थात 'भूमि माता है और मैं पृथ्वी का पुत्र हूँ', जैसी वेदग्रन्थों की घोषणा यह सिद्ध करती है कि वैदिक काल में ही राष्ट्रीयता का जन्म यहाँ हो गया था। "अर्च्चन्ननु स्वराज्य"[3] का स्वर ऋग्वेद में ही सुनाई पडता है जहाँ राष्ट्र का आधार त्याग माना गया है। प्राचीन काल में ही गोमेध और अश्वमेध स्वराज्य प्राप्ति के साधन माने गये थे। माखनलाल चतुर्वेदी पर भारत की राष्ट्रीयता सम्बन्धी इन विचारों का प्रभाव पडा है। उन्होंने 'अश्वमेध' अर्थात 'कर्म या विद्या की

ज्योति से दीप्तमान होकर स्वराज प्राप्त करने' का उपाय और 'गोमेध' अर्थात 'स्वार्पण पूर्वक कर्म से स्वराज प्राप्त करने' का सुझाव दिया है। "चतुर्वेदी केलिए उनका राष्ट्र पूर्णत्व की प्रतिमा है, जिसे उन्होंने कृष्ण के रूप में स्वीकार किया है। कृष्ण विष्णु का अवतार माने जाते हैं अतः कृष्णोपासना ही स्वराज्य यज्ञ का परवर्ती रूप माना जा सकता है।"[4] माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्र के सम्मुख दाँवों का योद्धा है। फूलों के सौरभ में अंगारों की ऊष्मा पानेवाला है। प्रेम और प्रलय का मधुर गायक है। अपना प्राण तक आराध्य देव को समर्पित किए 'एक भारतीय आत्मा' की राष्ट्रीय चेतना आध्यात्मिक एवं रहस्यमूलक भाव भूमि पर स्थिर है। यह ठीक ही सिद्ध कर सकता है कि रहस्यमूलक राष्ट्रीयता की साहित्यिक अभिव्यक्ति हिन्दी काव्य में माखनलाल जी की रचनाओं में ही पहली बार दिखाई पडती है। परतन्त्र राष्ट्र को यदि आध्यात्म भाव - भूमि में बाँध दिया जाए तो पराधीन जन मानस आपसी भेदभाव खोकर राष्ट्रदेवता के चरणों में सर्वस्वार्पण करने को तत्पर हो जाएगा और स्वराजप्राप्ति तथा देश सुरक्षा सरल हो जाएगी। इसलिए उन्होंने राष्ट्रीयता के क्षेत्र में राष्ट्रीय रहस्यवाद की प्रतिष्ठा की। "उनके राष्ट्रीय काव्य में वैष्णव भक्ति और राष्ट्रीय विचारधारा एकात्म होती दिखाई पडती है।"[5] "जब देश परतन्त्र था, चारों ओर निराशा व्याप्त हुई थी, तारुण्य सोया था तो ..... उस समय की आवश्यकता थी सोये हुए तारूण्य केसरी को ललकार कर जगाने की, स्वतन्त्रता संग्राम में सैनिकों का संघट जमा करने की, मातृभूमि की वेदी पर अपने मस्तकों को फूल बनाकर चढा देनेवालों को उत्साहित करने की। माखनलाल जी ने ये सब किये"[6]। उसकेलिए त्याग, तपस्या और समर्पण की आवश्यकता है, जिनका उपजीव्य है वैष्णव भक्ति भावना।

हम पहले ही यह देख चुके हैं, कि कवि की दृष्टि में कृष्ण और राष्ट्र एक ही है, कृष्णोपासना राष्ट्रोपासना है। राष्ट्र मन्दिर की पूजा, राष्ट्रदेवता की आराधना का प्रबल आग्रह और आत्मोसर्ग का अपरिमेय बल उनकी कविता में कूट - कूटकर भरे हैं। यह एक जीवित राष्ट्र के प्रति भक्ति का अर्चन है। यह आधुनिक वैष्णव भक्त है जिसने कृष्ण की रासभूमि और कुरुक्षेत्र को एक ही अस्तित्व के दो पहलू मान लिए हैं। "वे नर्मदा बनकर गोपियों की तरह जिस इष्टदेव के प्राणों में लहराने चाहते हैं"[7] तो फूल बनकर उसी आराध्य के प्रिय भक्तों और बलिदानी वीरों के चरणरज का स्पर्श भी करना चाहते हैं। वास्तव में यह रहस्यात्मक राष्ट्रीय चेतना बिलकुल विलक्षण है।

अपनी प्रारंभिक रचनाओं में ही कवि ने देशोद्धार या मानवता के उद्धार हेतु अपने प्रभु का आह्वान किया है। रामनवमी पर सन् 1906 ईं और 1916 ईं की दो कविताएँ इसका प्रमाण है कि जातीय उत्सव के अवसर पर भी यह राष्ट्रकवि देश में जागृति की आकांक्षा करते हैं। सन् 1905 ईं के बंगाल - विभाजन पर कवि ने खुलकर उसका विरोध किया और गीता के गायक से उन्होंने प्रार्थना की -

> "पधारो एक बार फिर सुनें घनुष की वह अद्भुत झंकार।
> तृ-भू कौशल्या की गोद आज हरी - हरी हरी हो उठे।"[8]

हरि शब्द कवि केलिए कृष्ण और राम दोनों अवतारों की मूर्ति है क्योंकि कवि ने यह स्वीकार किया है कि मैं तो कृष्णमय राम का उपासक हूँ। माखनलाल चतुर्वेदी की ईश्वर पूजा मानव सेवा का पर्याय है। यहाँ कवि अपने आराध्य तक पहूँचने की साधना के साथ-साथ आराध्य को इस धरती पर उतारने की कोशिश करते हैं क्योंकि कवि ने यह स्वीकार किया है कि मैं तो कृष्णमय राम का उपासक हूँ।

माखनलाल चतुर्वेदी की ईश्वर पूजा मानव सेवा का पर्याय है। यहाँ कवि अपने आराध्य तक पहूँचने की

साधना के साथ-साथ आराध्य को इस धरती पर उतारने की कोशिश भी करते हैं क्योंकि "श्याम का श्यामत्व इसी धरती की देन है।"[9] कवि का आराध्य कृष्ण किसी मन्दिर का देवता नहीं, वह राष्ट्र की एक प्रतिकृति है, जिसको दुःखी एवं पीडित मानवता के बीच खोजना ज्यादा श्रेयस्कर है -

"नहीं चाहिए बने यहाँ आ तू राजा का छौना,
दीन बन्धु है तो हाज़िर है दीन - कुटी का कोना।"[10]

उडने दे धनश्याम गगन में, 'महलों पर कुटियों को वारों तु ही क्या समदर्शी भगवान' जैसी कविताओं में कवि ने पतित मानवता के उद्धार हेतु गरीबी के प्रलयंकर क्रान्तिकार के रूप में अपने ईश्वर को प्रस्तुत किया है। रहस्यभावना को राष्ट्रीय क्रान्ति के स्वरों में ऊँडेलनेवाले माखनलाल जी की रचनाओं में कितने रमणीक बिम्ब एवं प्रतीक अनुभूति की गहराई और कल्पना की रंगीनों के साथ-साथ प्रस्तुत हुए हैं। कवि ने पौराणिक गाथाओं के आधार पर अपने राष्ट्रीय प्रतीकवादों को उभारा है। 'निःशस्त्र सेनानी' शीर्षक कविता में उन्होंने द्रौपदी को भारतमाता, कृष्ण को मोहनदास गाँधी, गाँधी जी के सत्याग्रह रूपी धर्मयुद्ध को महाभारत और अंग्रेज़ों के अन्यायी शासन को दुःशासन के रूप में प्रतीकबद्ध किया है -

"द्रौपदी भारत माँ का चीर, बढाने दौडे यह महाराज।
उधर वे दुःशासन के बन्धु, युद्ध भिक्षा की झोली हाथ।
इधर ये धर्म सिन्धु नय सिन्धु शास्त्र लो कहते हैं दो साथ।"[11]

विदेशियों के अत्याचारों से भारतीय जनता संत्रस्त थी। इस सन्दर्भ में कवि ने अनुभव किया कि इस मथुरा (परतन्त्र भारत) के निवासी (भारतीय) कंस (विदेशी) के नाम से काँप - उठते थे। फिरंगियों के अत्याचार से उत्पीडित जनता के उद्धार केलिए कृष्ण के अवतरण की आवश्यकता उन्होंने बतायी है

"मेरे गोकुल की काली रातों के ऐ काले सन्देश।
रे आ - नंद - अजीर के मीठे प्यारे धूँधुराले सन्देश,
अरे कंस के बन्दी गृह की उन्मादक किलकार
तीस करोड बन्दियों का भी, खुल जाने दे द्वार।"[12]

माखनलाल चतुर्वेदी केलिए कारागार तीर्थ - राज है और वहाँ की पीडाएँ भगवत् भक्ति को पाने का साधन है -

"प्यार! उन हथकडियों से, और कृष्ण के जन्म स्थल से प्यार
डार! कंघों पर चुभती हुई अनोखी जंजीरें हैं हार।"[13]

माखनलाल की कविता में प्रयुक्त मोहन, कृष्ण, वनमाली, गिरिधर जैसे शब्द या तो राष्ट्रदेवता या स्वातंत्रय देवता के प्रतीक हैं या तिलक और गाँधी जी जैसे राष्ट्रवीरों केलिए श्लेष रूप में अलंकृत हैं। कहीं-कहीं कृष्ण और गोपियाँ स्वाधीनता या स्वच्छन्दता के प्रतीक बनकर आए हैं। उनके काव्य में जहाँ रहस्योन्मुख राष्ट्रपूजा है, जिसकी अन्तर्धारा है - आत्मत्याग और बलिदान की भावना। कवि बलिदान और भक्ति में कोई अन्तर नहीं रखता -

"मेरे बलिदान - ज्ञान - कर्म - भक्ति धारा हो।"[14]

आराध्य के प्रति साधक के मन में जो भक्ति है, अनुराग है, उसके उत्कर्ष पर वह आराध्य केलिए मर मिटने की जुनून और आकुल पिपासा को शान्त करने केलिए सिर हथेली पर रखकर अपने आराध्य को दूँढता फिर रहा है। उनको इसी बात पर ही गर्व है। 'कलिका से कलिका की ओर' कविता में कवि ने एक कलिका

के माध्यम से अपनी इस अटल अभिलाषा को वाणी दी है कि माँ पर हँस - हँस बलि होने में ही अपनी जीवन - रेखा का हरापन है -

> “मैं बलि का गान सुनाती हूँ, प्रभु के पथ का बनकर फकीर,
> माँ पर हँस - हँस बलि होने में खिंच हरी रहे मेरे लकीर।”[15]
> सूली के पथ पर साजन की राह देखनेवाले बलि - पंथी गायक की हृदय - द्रावक तान सुनिए -
> “वह चरण चरण सन्तरण राग, मन भावना के मन हरणगीत,
> नि भावों के आँचल से जिस दिन झाँक - झाँक डटठा अतीत।
> तब युग के कपटे बदल - बदल कहता था माधव का निर्देश,
> इस ओर चलो, इस ओर बढो, यह है मोहन का प्रलयदेश,
> सूली के पथ साजन के रथ कि राह दिखाने आए हो,
> खोने को पाने आया हो।”[16]

राष्ट्रीय रहस्यवादी ‘एक भारतीय आत्मा’ केलिए जीवन के उत्सर्ग में ही जीवन का अमरत्व है। नश्वरता को खो देना अनश्वरता को पा लेना है।

इसप्रकार ‘चढे सूली उसे प्रभु का दरस हो’ में, ‘भक्ति और चुम्बनों का मूल्य सिर’ में प्रेम की भावना व्यक्त करनेवाले इस राष्ट्रीय कवि ने देश सेवा के मार्ग पर आनेवाले सारे कष्टों को ईश्वर केलिए समझकर फूल सा अनुभव किया है। कष्ट सहन करने की यह भावना रहस्योन्मुख राष्ट्रीयता की चरम सीमा है। कवि बलिपंथी से अनुरोध करता है कि शूलों को प्रसन्नता पूर्वक झेले और मुँह से आह तक न निकले-

> “मत व्यर्थ पुकारे शूल, शूल, कह फूल, सह शूल, शूल
> हरि को ही तल में बन्द किए, केहरी से कह नख हूल - हूल।”[17]

जिसप्रकार माखनलाल चतुर्वेदी की भक्ति राष्ट्रोन्मुख है, उसी प्रकार उनका प्रेम आध्यात्मिक और राष्ट्रोन्मुख दोनों है। उनके प्रेम ने त्याग और बलिदान से दीप्त होकर राष्ट्रसेवा की राह ली। उनके अधिकांश प्रेम गीतों में प्रेम और बलिदान, प्रणय और प्रलय का संघर्ष या द्वन्द्व है। कवि के ही शब्दों में कहें तो - “आराधना के रूप में जहाँ जीवन के समर्पण का बालकांड होता है, वहाँ जीवन की बली का लंका कांड भी हुआ करता है।”[18] उन्होंने प्रायः प्रणय और त्याग का एकसाथ व्याख्यान किया है। उनकी वैयक्तिक राग चेतना के साथ समर्पण की भावना संपृक्त है क्योंकि उनकेलिए देश निकाला ही प्रियतम पथ है और सूली के पथ में साजन के रथ की राह दिखाई देती है। वे प्रणय के रथ को प्रलय के पथ पर ले चलना चाहते हैं। उनके इस परस्पर विरोधी व्यक्तित्व को डॉ. नगेन्द्र ने ठीक ही स्पष्ट किया है - “माखनलाल जी के व्यक्तित्व में मधुर कवि और ओजस्वी सैनिक एक आलिंगन पाश में आबद्ध हैं। उनमें भावुक नारी और कर्मशील पुरुष का संयोग है। यहाँ एक ही व्यक्तित्व में दोनों तत्व मिल गए हैं।”[19] माखनलाल जी केलिए प्रियतम, राष्ट्र और भगवान एक ही सूत्र में पिरोए प्रतीत होते हैं।

पराधीन भारत की मुक्ति केलिए जो तरुणाई दमन जनित यातनाओं को सहर्ष झेलते हुए, मस्तक उतारने में आनकानी न करते हुए, सिर सौंपने में ही रसास्वदन पा लेती है, वही कवि की दृष्टि में सच्ची और सरस तरुणाई है -

> “मत बोले वे रस की बातें, रस उसका जिसकी तरुणाई

रस उसका जिसने सिर सौपों, आगी लगा भभूत रमाई।"[20]

यही कवि की प्रेममूलक राष्ट्रीय चेतना का सार तत्व है। यही रस "रामरसायन प्रेम रस पीवत अधिक रसाल। सिर सौंपे साई पिवे नहीं तो पिया न जाई"[21] के गीत के रसमग्न भक्त कवि कबीरदास में भी उपलब्ध है। किन्तु कबीर का सिर माँगनेवाला निर्गुण ईश्वर है तो माखनलाल का ईश्वर हिमकिरीटिनी भारत माँ है जो यहाँ तरुणाई से सीस माँग रही है। जवानी जब मरण का त्यौहार मनाती है तभी जीवन सार्थक होता है।
माखनलाल चतुर्वेदी के देशप्रेम का आदर्श व्रजगोपिकाओं के त्यागमय प्रेम का आदर्श रहा है। प्रिय का सुख अपना सुख, प्रिय की पराधीनता अपनी पराधीनता माननेवाली गोपियाँ अपने प्रियतम को कारागार में बन्द पडे देखकर कैसे सुख से चयन कर सकती? कैसे रत्नाकर की लहरों में अपना चरण भिगोएं? इसी प्रेम के वाहक 'एक भारतीय आत्मा' रजत मुकट अपने सिर पर पहनने के बदले आराध्य के चरणों पर लहरानेवाली जीवन की नर्मदा का रूप धारण करना चाहते थे। भारत माता के हाथ स्वराज्य रखने केलिए, प्रिय को सुखी बनाए रखने केलिए, बडे से बडे त्याग को भी वे सहर्ष अपनाते हैं। कवि के शब्दों में -

"बलि होने की परवाह नहीं, मैं हूँ कष्टों का राज्य रहे,
मैं जीता जीता हूँ, माता के हाथ स्वराज्य रहें।"[22]

उनके प्रेमगीतों में श्रृंगार का बडा सजीव चित्र खींचा गया है किन्तु कवि मरण और बलिदान को जवानी का श्रृंगार कहता है क्योंकि कवि के मतानुसार -" प्रेमी वह है, जो प्रेम पर मरे, प्रेम वह, जिसपर जिसकी अपरूपेय शक्ति पर, स्नेह की ओत प्रोतता पर और बलि को छू लेनेवाली सामर्थ्य पर, जगत मर - मरकर रह जाए।"[23]

माखनलाल की वीर सिपाहिनी की नेह सुहागिन का श्रृंगार बडा अद्भूत है। वह अपनी कलाइयों में पहनी चूडियों को उतारकर भुज दण्डों का श्रृंगार तीर - कमानों से करना चाहती है -

"चूडियाँ बहुत हुई कलाइयों पर, प्यारे भुजदण्ड सजा दो।
तीर कमानों के सिंगार दो, ज़रा जिरह - बख्तर पहना दो।"[24]

कवि की 'सिपाहिनी' पति प्राणा नारी है क्योंकि जहाँ सिपाही प्रलयंकर शंकर का रूप धारण कर लेता है वहाँ पतिप्राणा सिपाहिनी काली और दुर्गा का रूप धारण करने से न हिचकती। यह निम्न लिखित पंक्तियों में दृष्टव्य है -

"मेरे प्रणय और प्राणों के ओ सिन्दूर शक्तिमा लाली
तुम कैसे प्रलयंकर शंकर, जो न रहूँ, मैं दुर्गा काली।"[25]

कवि ने यहाँ अप्रस्तुत योजना से अभिसारिणी का श्रृगांर और उसके अभिसार स्थल की झाँकी प्रस्तुत की है, वहाँ स्पष्ट रूप से बेडियों में जकडी भारत माता और उसकी मुक्ति केलिए चलाए राष्ट्रीय आन्दोलन का रूप ही निखर आया है -

"जंजीरे हैं, हथ कडियाँ हैं, नेह सुहागिन की लडियाँ हैं।
काले जी के, काले साजन, काले पानी की घडियाँ हैं।"[26]

संक्षेप में कहा जा सकता है कि माखनलाल चतुर्वेदी की भक्ति जिसप्रकार राष्ट्रोन्मुख है, उसी प्रकार उनका प्रेम

भी रहस्योन्मुख एवं राष्ट्रोन्मुख है। उन्होंने ही रहस्योन्मुख राष्ट्रीय काव्य की अभिनव धारा का सूत्रपात किया था। उनके काव्य में व्यक्त रहस्यवादी राष्ट्रीय चेतना का निष्कर्ष निकालने केलिए श्रीकान्त जोशी का यह कथन युक्ति संगत होगा - "आराधना की यह सबसे ऊँची अवस्था है। राष्ट्र को देवता मानकर उन्होंने बन्दी गृह के कृष्ण का ही साकार पा लिया था, और अपने आराध्य को बन्दी गृह से मुक्त करने केलिए जो कुछ किया, वह सब अपनी कविता के माध्यम से ही नहीं, अपनी साँसों और कार्यव्यापारों से भी उन्होंने स्पष्ट और सिद्ध किया है।"[27] उनकी आध्यात्मिक राष्ट्रीयता का प्रस्तान बिन्दु राजनीतिक है और उत्कर्ष आध्यात्मिकता का आभास देनेवाला आत्म त्याग है किन्तु वह परिवेशगत, भक्तिपरक एवं उद्देश्य मुलक है। उनकी कविताओं में पहले प्रेम और बलिदान का द्वन्द्व है, फिर उसमें प्रेम और बलिदान का आलिंगन है, बाद में स्वातंत्र्य संग्राम के अमर व सक्रिय सेनानी माखनलाल जी श्रृंगार को उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं और पूर्ण रूप से प्रलय ने ही उनकी प्रणय ह्वनि को छीन लिया।

सन्दर्भ

1. यजुर्वेद, पूर्व अध्याय, 9/23, उद्घृत. डॉ. के.के.शर्मा - हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय काव्य का विकास, नवयुग प्रकाशन, भोपाल, सं. 1970, पृ.22.
2. अथर्ववेद, अध्याय, 12/1, उद्घृत, सुधाशंकर कलवडे - आधुनिक हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना, पुस्तक - संस्थापन, कानपुर, सं. 1971. पृ.24.
3. ऋग्वेद, श्लोक 1/80, उद्घृत, विद्यानाथ गुप्त - हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना, भारतीय साहित्य मन्दिर, नई दिल्ली, सं 1966, पृ.11,
4. प्रेमनारायण टंडन - माखनलाल चतुर्वेदी : व्यक्तित्व और कृतित्व, नन्द - नन्दन प्रकाशन, लखनाऊ, सं.1980, पृ.32,
5. डॉ. इन्दुवशिष्ट - ज्योत्सना, जनवरी 1990, पृ.48,
6. डॉ. रामधर शर्मा - समीक्षा के नए सन्दर्भ, प्रगति प्रकाशन, आगरा, सं.1974, पृ.40,
7. माखनलाल चतुर्वेदी - हिमकिरीटनी, भारती, भण्डार, प्रयाग, सं.1943, पृ.3,
8. माखनलाल चतुर्वेदी - रचनावली - 6, वाणी प्रकाशन, दिल्ली,
9. वही. पृ.23,
10. वही, पृ.46,
11. माखनलाल चतुर्वेदी - हिमकिरीटनी, पृ.97,
12. माखनलाल चतुर्वेदी - समर्पण, भारती भण्डार, प्रयाग, सं.1956, पृ.79,
13. माखनलाल चतुर्वेदी - हिमकिरीटनी, पृ. 43,
14. माखनलाल चतुर्वेदी - माता, भारती भण्डार, प्रयाग संवत 2018, विं. पृ.149,
15. माखनलाल चतुर्वेदी - हिम किरीटनी, पृ.43,
16. वही. पृ.13,
17. वही. पृ. 99,
18. श्रीकान्त जोशी - दैनिक हिन्दुस्तान, 5, अप्रैल 1978, पृ.108,
19. डॉ. नगेन्द्र - विचार और विश्लेषण, भारतीय साहित्य - मन्दिर, दिल्ली, सं 1988, पृ.136,
20. माखनलाल चतुर्वेदी - हिमकिरीटनी, पृ. 118,
21. कबीरग्रथ्यावली, साखी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, सं.1980. पृ. 14,
22. माखनलाल चतुर्वेदी - हिमकिरीटनी, पृ. 26,
23. माखनलाल चतुर्वेदी - साहित्य देवता, भारती भण्डार, प्रयाग, सं.1943, पृ.92,
24. माखनलाल चतुर्वेदी - हिमकिरीटनी, पृ. 140,
25. वही. पृ.141,

26. माखनलाल चतुर्वेदी हिमतरंगिनी, भारती भण्डार, प्रयाग, सं. 1949, पृ.85,
27. श्रीकान्त जोशी, दैनिक हिन्दुस्तान, अप्रैल 1978, पृ. 22